इकाई 14 पर्यावरण नीति

इकाई की रूपरेखा

14.0 उद्देश्य

14.1 प्रस्तावना

14.1.1 पर्यावरण की संकल्पना और मानव की भूमिका

14.2 पर्यावरण नीति के लिए चुनौतियाँ

14.2.1 गरीबी और जनसंख्या विस्फोट

14.2.2 भूमि पर दबाव मरूस्थलीकरण और वन–कटाई

14.2.3 प्रदूषण

14.2.4 संस्थागत और नीति असफल

14.2.5 विश्व के पर्यावरणीय मुद्दे

14.3 राष्ट्रीय पर्यावरण नीति, 2006 के उद्देश्य और सिद्धान्त

14.3.1 उद्देश्य

14.3.2 सिद्धान्त

14.4 नीति और वैधानिक ढाँचा

14.4.1 पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मन्त्रालय की भूमिका और उद्देश्य

14.5 पर्यावरण की आर्थिक संवृद्धि और शहरीकरण की चुनौतियाँ

14.6 निष्कर्ष

14.7 शब्दावली

14.8 संदर्भ लेख

14.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

14.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप निम्न को समझ सकेंगेः

- पर्यावरण नीति का महत्व और उसके क्षेत्र;
- पर्यावरण संरक्षण से सम्बन्धित विधिक और संवैधानिक प्रावधानों का व्यापक अर्थ; और
- पर्यावरण पर आर्थिक संवृद्धि और शहरीकरण के प्रभाव।

14.1 प्रस्तावना

राष्ट्रीय पर्यावरण नीति, 2006 (National Environment Policy - NEP) (मई 2006 में केन्द्रीय मन्त्री परिशद से अनुमोदित) मानव पर्यावरण के संरक्षण के अंतर्राष्ट्रीय प्रतिबद्धता की अनुक्रिया है और भारत के संविधान द्वारा दिये अधिदेश से एक स्वच्छ पर्यावरण को बनाए रखने की राष्ट्रीय प्रतिबद्धता है। इसके पश्चात् इसको असंख्य न्यायिक अधिमतों के द्वारा मजबूत बनाने का प्रयास किया गया है।

14.1.1 पर्यावरण की संकल्पना और मानव की भूमिका

पर्यावरण का अर्थ आसपास की स्थितियों से या वातावरण से हैं, जिसमें व्यक्ति या पेड़–पौधे, पशु–पक्षी रहते हैं या वे अपना संचालन करते हैं। इसका अर्थ प्राकृतिक विश्व भी है जिसमें सब कुछ समाहित है अथवा एक विशिष्ट भौगोलिक क्षेत्र, विशेषकर जो मानवीय गतिविधियों से प्रभावित होता हो। पर्यावरण के अनेक घटक हैं। इसके प्रत्येक घटक जिनका गठन हुआ है और जिसमें मनुश्य अपने हित और कल्याण पर निर्भर है तथा उसके कारण भी जीवित है। मानव और पष्थ्वी की अन्य जातियों के बीच एक बड़ा अन्तर है जो पर्यावरण पर अपना प्रभाव डालते हैं। पर्यावरण पर पहले का अधिक प्रभाव होता है जबकि बाद का बहुत ही कम होता है, स्वस्थ पारिस्थिति तन्त्र या पर्यावरण मानव और अन्य जीव जन्तुओं के लिए संवृद्धि तथा जीवित रहने के लिए अत्यंत आवश्यक है। इसलिए यह आवश्यक है कि इसके सम्बन्ध में देखना है कि मानव के क्रियाकलाप और लोक नीतियों में पर्यावरण की गुणवत्ता को बनाए रखा जाये, उसको संरक्षित करने के लक्ष्य के साथ तालमेल बनाए रखना अनिवार्य है।

इस नीति का प्राधिकृत सिद्धान्त है कि आजीविका कमाने और सब के कल्याण को सुरक्षित रखते समय पर्यावरण सम्बन्धी संसाधनों का संरक्षण और अभिरक्षण करना अनिवार्य शर्त है। प्राकृतिक संसाधनों में गिरावट आना व उसमें कमियाँ होने से पारिस्थिति तन्त्र में असंतुलन को बढ़ावा मिलता है और जैव विविधताओं की हानि होती है जिसके परिणामस्वरूप पृथ्वी के इस नक्षत्र पर जीवन की समाप्ति हो सकती है। इसलिए इस तरह की आपदाओं और संकटों से बचने के लिए, इस राष्ट्रीय पर्यावरण नीति को सभी विकास की गतिविधियों में पर्यावरण के संरक्षण पर चिन्ता करते हुए, इस नीति को हमें मूल धारा में रखना चाहिए। इसका पालन करना चाहिए।

14.2 पर्यावरण नीति के लिए चुनौतियाँ

विकास कार्यक्रमों और परियोजनाओं की पर्यावरणीय निगरानी पर हुए अनुसंधान की रिपोर्ट बहुत ही भयानक तथ्यों को प्रकट करती है जिससे अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक विकास में संकटपूर्ण अनुभव देखने को मिलें हैं, विकास के प्रयास के परिणामों पर विश्व समुदाय (लोग और राष्ट्रों) ने यह महसूस किया है कि हम अपने स्वास्थ्य और अपना कल्याण व हित तथा भविष्य में आने वाली पीढ़ी के भविष्य को हम पर्यावरणीय प्रलय, तथा विनाश को अपने क्रियाकलापों में बदलाव करके बचा सकते हैं। सन् 1972 में मानव पर्यावरण पर स्टॉकहोम में एक सम्मेलन का आयोजन किया था (इसमें 113 देशों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया था) इसमें घोषणा की गई थी कि : "व्यक्ति के पर्यावरण के दोनों पक्षों को प्राकृतिक और व्यक्ति द्वारा बनाया गया है ये दोनों कल्याण और मूल मानव अधिकारों – यहाँ तक कि जीवन जीने के स्वयं के अधिकार अत्यंत आवश्यक है, इसलिए पर्यावरण सुरक्षित रखना अनिवार्य है।"

भारत पर्यावरणीय विनाष की चुनौतियों का सामना कर रहा है जोकि बहुत ही गंभीर तो हैं ही षायद इसकी क्षतिपूर्ति करना भी असंभव है। भारत के सामने जो प्रमुख पर्यावरणीय चुनौती है, वह आर्थिक और सामाजिक समस्याओं के बीच सम्बन्ध है उसके कारण पर्यावरणीय गिरावट आई है। ये चुनौतियाँ सहज रूप से प्राकृतिक संसाधनों की स्थितियाँ जैसे कि भूमि, जल, वायु और वनस्पतियाँ (पेड़–पौधों का जीवन) और जीव जन्तु (पशु पक्षियों के जीवन) के साथ संबद्ध हैं। यहाँ पर यह मुद्दा या बिन्दु है कि पर्यावरण को नष्ट करने वाले कारण सामाजिक व आर्थिक समस्याएँ हैं जिसमें आर्थिक और संरचनात्मक सुधारों का लक्ष्य है, जिसको प्राप्त करना बहुत ही कठिन है। दुश्यचक्र को तोड़ने के लिए

केवल सभी स्तरों पर सरकार द्वारा अधिक ध्यान देने पर सफलता नहीं मिलेगी बल्कि लोगों को भी इस पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। वर्तमान स्थिति के महत्वपूर्ण विकास पक्षों का कुछ पालन करने पर मानव पर्यावरण पर नकारात्मक परिणाम हमारे सामने आए हैं।

14.2.1 गरीबी और जनसंख्या विस्फोट

गरीबी में अनेक आयाम हैं जो भयंकर प्रदूषण फैलाने में सहयोग देते हैं। गरीबी केवल मानव पर्यावरण को नश्ट नहीं करती है बल्कि यह विकास में भी बाधक है। ग्रामीण गरीबों की निर्भरता, विशेषकर आदिवासी समाजों में जो प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर करते हैं (उनका अत्यधिक संग्रह तथा वाणिज्यिक कार्यों के लिए प्रयोग करना, उनका शोषण करना) ये सब पर्यावरणीय निम्नीकरण करने में सहयोग देते हैं, जिसके कारण उपजाऊ भूमि, जंगल के मूल्यवाद पदार्थों व वन–सम्पत्तियों, जंगली जानवरों, मछलियों और जल और वायु की कोटि पर विपरीत प्रभाव डालती है। इसके अतिरिक्त, द्रद्रयीयिता की जो प्रक्रिया है वह पर्यावरण को और अधिक खराब करने में फिर से सहायता करती क्योंकि गरीब आदमी सीधे ही प्राकृतिक सम्पदाओं पर निर्भर करता है, इससे पर्यावरण में तेजी से गिरावट होने लगती है। इसके अतिरिक्त शहरी पर्यावरणीय गिरावट का कारण हैं, वहाँ पर कूड़े–कचरे का ठीक से निपटान न होना, स्वच्छता की स्थिति भयानक है, उद्योगों और वाहनों के द्वारा होने वाले प्रदूषण केवल प्राकृतिक संसाधनों पर ही प्रभाव नहीं डालते हैं (मुख्य रूप से जल, वायु और भूमि) बल्कि शहरी गरीबों के स्वास्थ्य पर भी भयंकर प्रभाव डालते हैं। इसलिए, यह उनके रोजगार के अर्जन करने की क्षमता को प्रभावित करते हैं, बल्कि उनके बच्चों के स्वास्थ्य और उनकी शिक्षा को नश्ट कर देते हैं।

गरीबी और पर्यावरण में गिरावट आना दोनों मिलकर जनसंख्या की वृद्धि होना संकट का कारण बनाने में दबाव बनाते हैं। शहरी गन्दी बस्तियों में रहने वाले लोग और गाँवों के गरीब यह जनसंख्या वृद्धि के बड़े परिवार बनते हैं, यह संख्या वृद्धि के घातक बिन्दु हैं। इसके साथ ही 1337 मिलियन लोगों की जनसांख्यिकी के दबाव (मई 2019 में किया गया अनुमान) के परिणामस्वरूप मानव जीवन की कोटि और प्राकृतिक संसाधनों पर व्यापक प्रभाव डालते हैं जिसके कारण पर्यावरणीय गिरावट तो आती है और लोगों का जीवन दूभर हो जाता है। शहरी क्षेत्रों में पर्यावरण की समस्या जनसंख्या में अत्यधिक वृद्धि और छोटे कस्बों और गाँवों से होने वाले आप्रवासन का घातक आक्रमण माना गया है। सन् 1911 में भारत की शहरी जनसंख्या लगभग 11.4 प्रतिशत आंकी गई थी जो सन् 2019 के आते–आते लगभग 35 प्रतिशत हो गई है। भारत में शहरी जनसंख्या त्वरित गति से बढ़ी है जिसके कारण अनेक समस्याओं का जन्म हुआ जैसे आवासों की कमी होना, मलिन बस्तियों का बसना या बनना, रिहायषी स्थानों का संकुचन होना तथा पर्यावरण में भारी गिरावट का उत्पन्न होना है। इन सभी कारणों के परिणामों से सब से अधिक गरीब लोग प्रभावित हुए हैं।

जहाँ तक ग्रामीण क्षेत्रों की स्थिति का सवाल है वहाँ भी इसके समान ही समस्याएँ और हालत संतुश्टिपूर्ण नहीं हैं। गाँवों में आवासीय, जल आपूर्ति, बिजली जैसी भयंकर समस्याओं में असीमित वृद्धि हुई है। ईंधन के लिए वनों की कटाई और उनका भण्डारण और पशुओं तथा अन्य पशुधन के चारे के लिए अत्यधिक जंगलों व घास की कटाई के कारण अब जंगल वनस्पति विहीन और उजाड़ हो गए हैं। इन सबके कारण हमेशा के लिए प्राकृतिक संसाधनों का न्यूनीकरण हो गया है, अब वे उजाड़ हो गए हैं। इसके अतिरिक्त ग्रामीण क्षेत्रों में सामुदायिक अपशिष्टों व कूड़े–कचरे के निपटान की व्यवस्था न होने के कारण जल

संदूशण में वृद्धि हुई है तथा जीवन की स्थितियों में अस्वच्छता में वृद्धि हुई है तथा स्वच्छता की समस्या उत्पन्न हो गई है। ये सभी समस्याएँ एक साथ मिलकर पर्यावरणीय चिन्ताओं में वृद्धि करती हैं।

14.2.2 भूमि पर दबाव मरूस्थलीकरण और वन–कटाई

भारत में उच्च जनसंख्या का घनत्व और गरीबी का अत्यधिक उच्च स्तर मिल कर एक घातक संकट उत्पन्न करते हैं। भारत के पास लगभग 329 मिलियन हेक्टेयर भूमि है (विश्व की लगभग कुल भूमि का 2.4 प्रतिशत भूमि का हिस्सा इसके पास है)। इसमें से 170 मिलियन हेक्टेयर कृषि भूमि है और 130 मिलियन हेक्टेयर भूमि पर वर्तमान में खेती बाड़ी की जा रही है क्योंकि आंचलिक स्थल क्रमिक और पारिस्थितिी के कारण आबद्ध या उसमें समाहित हैं तथा ग़ैर कृषि भूमि के प्रयोग के लिए माँग में वृद्धि हुई है, इसलिए कृषि भूमि के लिए क्षेत्र में वृद्धि करने की गुंजाइष नहीं है। जनसंख्या में वृद्धि के कारण भारत में भूमि की प्रति व्यक्ति उपलब्धता सन् 1950 में 0.89 हेक्टेयर भूमि से गिरकर सन् 2018 में 0.24 हेक्टेयर भूमि प्रति व्यक्ति हो गई है और इसके बावजूद भी जनसंख्या में वृद्धि कर के कारण ऐसा अनुमान किया जा रहा है कि यह सन् 2020 तक 0.20 हेक्टेयर भूमि घट जाएगी, कम हो जाएगी।

भूमि की उपलब्धता की कमी होने के कारण संरचनाओं का विस्तार करना, खनिज संसाधनों का विकास, औद्योगिकीकरण तथा शहरीकरण के फैलाव में उसके विकास में प्रमुख बाधा के रूप में हमारे समक्ष हैं। इस के साथ ही देश की 60 प्रतिशत भूमि कृषि भूमि है जहाँ पर्यावरणीय गिरावट के कारण उसका शोषण हो रहा है। इसके साथ ही दोहरे दबाव के कारण एक व्यापक क्षेत्र एक बंजर भूमि बनने के कगार पर है और वह भयानक खतरे में पड़ा हुआ है। एक तरफ अपने तौर तरीकों के लिए अमीर लोगों के द्वारा प्राकृतिक संसाधनों का दुर्विनियोजन किया जा रहा है, वहीं पर दूसरी ओर गरीब किसान अपने आपको जीवित रखने के उद्देश्य से सीमांत कृषि भूमि को विस्तार देने के लिए अवैध कब्जा करने का प्रयास कर रहे हैं, उसके लिए संघर्ष कर रहे हैं। यह सीमित चारवाह भूमि के विस्तार के लिए वन भूमि पर अतिक्रमण कर रहे हैं। भूमि प्रयोग करने का व्यापक रूझान बन गया है, त्वरित जनसंख्या वृद्धि के कारण लोग जीवनयापन के लिए भूमि की खोज में और वाणिज्यिक हितों को पूरा करने के लिए और अधिक भूमि की माँग की जा रही है।

औद्योगिकीकरण और शहरीकरण कृषि सम्बन्धी मिश्रण में जुड़ गए हैं। त्वरित जनसंख्या वृद्धि कृषि में गतिरोध तथा पर्यावरण में गिरावट ये सब एक–दूसरे से संबद्ध हैं, और आपस में एक साथ मिलकर अपने दबाव को बनाते हैं। भारत में कृषि विकास जीवन को बनाए रखने के लिए खाद्य पदार्थ उपलब्ध कराता है तथा इसकी बढ़ती हुई जनसंख्या को रोजगार देता है, परन्तु यह लगातार या सतत् रूप से उत्पादनों का संरक्षण नहीं कर पाते है। जबकि पूरे देश में इसकी वर्तमान जनसंख्या की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए समुचित खाद्य का उत्पादन किया जाता है (1.3 बिलियन से अधिक), परन्तु खाद्य वितरण में समानता न होने के कारण लोगों की मिलियन जनसंख्या उदर पूर्ति के बिना रह जाती है, उन्हें खाद्य पदार्थ प्राप्त नहीं होता है। अनुउपयुक्त कृषि कार्य या व्यवहार तथा अनेक प्रकार की कृषि की समस्याएँ न केवल इष्टतम उपज से कम पैदा करते हैं बल्कि यह भूमि क्षरण व कटाव मरूस्थलीकरण और क्षार (खारी) मिट्टी के निर्माण में अपना सहयोग प्रदान करती है। रासायनिक खादों और कीटनाशक दवाओं का अत्यधिक प्रयोग तथा व्यापक सिंचाई का स्तर अत्यधिक प्रभावित करते हैं। कृषि सम्बन्धी अवरोध और पर्यावरण में गिरावट आने पर भी जनसंख्या वृद्धि को प्रभावित करती है। अधिक शिशु जन्म और अधिक बाल मृत्यु दर में

वृद्धि खाद्य पदार्थों की कमी के कारण होती है, इसके परिणामस्वरूप कुपोषण की कमी से मृत्यु दर में वृद्धि होती है और यहाँ के सभी स्त्री–पुरुष अधिक बच्चे पैदा करते हैं ताकि कुछ बच्चे तो बच सके जो बुढ़ापे में सहारा बन सकें।

हमारे प्राकृतिक वनों का संरक्षण और सषक्तीकरण एक अन्य संकटपूर्ण क्षेत्र है। अर्थव्यवस्था के लिए ऊर्जा की उपलब्धि पर इनका विशेष प्रभाव होता है, क्योंकि देश के अधिकतर कोयला खदानों व संसाधनों का भण्डार तो वनों के अंदर ही व्याप्त हैं। सम्पूर्ण भारत में पर्यावरण के क्षेत्र इस वर्तमान शताब्दी में खाली हो गए या नष्ट हो गए हैं और वे वन भूमि बन कर रह गए हैं। भारत के वन को घेरने या उन पर आवरण डालने, इस सम्बन्ध में तथ्य प्रकट करते हैं कि 75 मिलिटन हेक्टेयर भूमि को वन के रूप में वर्गीकृत किया गया है, 64 मिलिटन हेक्टेयर भूमि वास्तव में वनों का संरक्षण करती है, और इसके बाद या इससे बाहर केवल 30 मिलिटन हेक्टेयर भूमि संरक्षित की गई है, जिसमें केवल लगभग 9 प्रतिशत देश का भौगोलिक वन संरक्षित बना हुआ है। वन कटाई का प्रमुख कारण वाणिज्यिक प्रयोग के लिए पेड़ों को काटना या गिराना है तथा वनों को कृषि के प्रयोग के लिए वन भूमि में परिवर्तन करना, आवासों का निर्माण करने और उद्योग स्थापित करने के लिए और इससे कुछ कम अधिक ईंधन के लिए बेरहमी से वनों की कटाई का काम व्यापक स्तर पर किया गया है।

वनों की कटाई का कारण जीवित प्राकृतिक संसाधनों को नश्ट करना है। एक अनुमान के अनुसार विश्व में कुल 25,0000 पेड़–पौधों की जातियों में से 15,000 जातियाँ तथा 75,000 पशुओं की जातियों में से विश्व की 1.5 मिलियन जातियों में से उसको नश्ट करने की ध मकी भरी आषंका है जो क्रमानुसार मानव की गतिविधियों के विस्तार के कारण नश्ट होते जा रहे हैं, यह प्राकृतिक वन क्षेत्र/यह क्रियाकलाप भूमि और वनों दोनों में किए जा रहे हैं। भारतीय मरूभूमि पारिस्थितिकीय तन्त्र (भारत का भौगोलिक क्षेत्र का 127.3 एम एच ए क्षेत्र संरक्षित किया गया है) जिसमें अत्यंत ही समष्द्ध जातियाँ व उपजातियाँ मौजूद हैं, स्तनधारियों की विभिन्न जातियाँ षीत काल के दौरान क्षेत्र प्रवासियों जैसे पक्षियों की जातियाँ जनसंख्या में त्वरित वृद्धि के कारण उनकी नस्ल समाप्त होने के कगार पर बन गई हैं।

14.2.3 प्रदूषण

पर्यावरणीय प्रदूषण वायु, जल, भूमि, खनिज, विकिरण या गंध के परिणामस्वरूप होता है और इससे प्रत्येक नागरिक का जीवन टकराता है अथवा प्रभावित होता है। जल प्रदूषण सबसे अधिक गंभीर और भयानक होता है, यह लोगों के स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होता है। एक अनुमान है कि भारत में जो जल उपलब्ध होता है वह 70 प्रतिशत नगरों, शहरों और उद्योगों के समुदायों का मलमूत्र, कचरा इत्यादि का सम्मिश्रण ही होता है।

भारत में जल अन्य संसाधनों से अधिक दुर्लभ है, हमारी जनसंख्या विश्व की जनसंख्या की 16 प्रतिशत है और हमारे यहाँ प्रयोग किए जाने वाले पानी का मात्र 4 प्रतिशत है। इसी तरह से लोगों के स्वास्थ्य और कल्याण के लिए जल प्रदूषण का निहितार्थ और गंभीर है। एक अनुमान के अनुसार भारत में दो–तिहाई रोग जल से पैदा होने वाले माने जाते हैं, जैसे कि टाइफाइड, संक्रामक, यकृत शोथ, हैजा और दस्त लगना है। इसमें भारत की बड़ी नदियाँ भी सम्मिलित हैं जैसे कि गंगा, यह आज अत्यधिक प्रदूषित है, इसको औद्योगिक उत्पादन तथा घरों में प्रयोग होने वाले घटिया किस्म के ईंधन को प्रदूषित करने में महत्वपूर्ण योगदान है। इस तरह से यह पर्यावरण का बढ़ता हुआ महत्वपूर्ण पक्ष बन गया है। इसके परिणामस्वरूप और इसके घटिया रखरखाव के कारण कार्बन मोनोआक्साइड, हाइड्रोकार्बन,

नाइट्रोजन ऑक्साइड तथा अन्य प्रदूषण की व्यापक मात्रा का उत्सर्जन हुआ है। इसके अतिरिक्त जल और वायु प्रदूषण के अलावा, पर्यावरण से सम्बन्धित षोर–षराबा सबसे बड़ी चिन्ता का विषय बन गया है। कोलाहल का मुख्य कारण परिवहन, औद्योगिकी, मनोरंजन तथा धार्मिक गतिविधियाँ जो अपने कार्यक्रम में ऊँची आवाज का ही नहीं लाउडस्पीकरों का प्रयोग अत्यधिक मात्रा में करते हैं जिसके कारण असंख्य हानियाँ होती हैं।

14.2.4 संस्थागत और नीति असफलता

संस्थागत व्यवस्था का असफल होने का अर्थ है जो विनियमों का निर्माण किया हुआ हो। उनका प्रयोग न करना अथवा उनको पूरी तरह से लागू न करना, इस तरह से पर्यावरणीय संसाधनों का प्रयोग न करना से, इन सबके परिणामस्वरूप पर्यावरण को हानि तो होती है उसका स्तर भी निम्न हो जाता है। इस प्रकार के विनियमों के मानव और पर्यावरणीय संसाधनों के प्रयोग के बीच जो सम्बन्ध होते हैं वे बहुत ही संकटपूर्ण और आलोचनात्मक होते हैं, जैसे कि विभिन्न संसाधनों के प्रयोग के लिए मिलने वाले अनुदानों व सहायता सम्बन्धी विनियमन हैं उनका स्पष्ट न होना इत्यादि के कारण नीतियाँ असफल होती हैं। अनोपयुक्त या समुचित नीति के न होने पर भी पर्यावरणीय परिणामों पर विपरीत प्रभाव के साथ लोक व्यवस्थित प्रणाली में पाबन्दी न लगाने की दिशा में अपनी अनुक्रिया कर सकती है।

14.2.5 विश्व के पर्यावरणीय मुद्दे

एक अन्य प्रमुख चुनौतियों के समूह का उद्‌गम हुआ है जो कि ओज़ोन की परत का निषेशीकरण यानी नश्ट होने के कगार पर और जैविक विविधताओं में कमी आना, उन के स्तर में गिरावट होना। इसमें विश्व के पर्यावरणीय चिन्ताओं के उभार से जलवायु परिवर्तन जैसी चुनौतियाँ मानव जीवन के समक्ष हैं। वातावरण में कार्बनडाइऑक्साइड में वृद्धि व निर्माण होना तथा औद्योगिकी एवं परिवहन चलाने के कारण धुएँ में उत्सर्जन होना, यह सब वैष्विक तापमान यानी भूमण्डल के ताप में वृद्धि करने में सहयोग देते हैं। अब यह भयभीत करने वाली स्थिति बन गई है कि कार्बनडाइऑक्साइड दोहरे रूप से संकेन्द्रित हो गई और इसका स्तर लगभग तीन सौ पचास पार्टस पर मिलियन पी.पी.एम. (Parts Per Million - PPM) स्थिति है एक अनुमान के अनुसार यह 2030 से 2075 तक सात सौ पी.पी.एम. तक वृद्धि होने की संभावना है, और विश्व के तापमान में वृद्धि 1.5 और 4.0 डिग्री सेल्सियस तक पहुँचने की संभावना है और समुद्र के जल का स्तर 20 सेंटीमीटर से एक मीटर तक पहुँचने की संभावना बनी हुई है। इसके अतिरिक्त, भयंकर बाढ़, तूफान, अन्धड और अन्य प्राकृतिक विपत्तियों की घटनाओं में दोहरी वृद्धि होंगी।

पर्यावरण सम्बन्धी समस्याओं में घटने का एक और भी कारण है कि हम प्रौद्योगिकियों के प्रयोग समुचित रूप से नहीं करते हैं, इसलिए पर्यावरणीय समस्याओं में वृद्धियाँ हो रही हैं। इस तरह की समस्याओं के यहाँ उदाहरण दिए जा सकते हैं जैसे कि षस्त्रों की दौड़, विशाक्त कचरा व अपशिष्ट ओज़ोन परत के नश्ट होने की चुनौती, संभावित जलवायु में परिवर्तन, इत्यादि प्रमुख समस्याएँ हमारे समक्ष हैं जिनका हमको निराकरण करना है। इस प्रकार की समस्याओं का आर्थिक प्रभाव आपदाओं से परिपूर्ण होगा। पर्यावरण पर प्रौद्योगिकी का जो प्रभाव पड़ रहा है, यह सोचनीय व चिन्ताजनक स्थिति में पहुँच चुका है। जबकि विकसित देशों में इसकी क्षमता का प्रतिशत बहुत ही कम आंका गया है। विकासशील दुनिया के लिए पर्यावरण के लिए विवेकपूर्ण प्रौद्योगिकियों का प्रयोग करना तथा उनका अन्त में इसके विपरीत उत्पादन करना यह केवल इसलिए नहीं करना है कि पर्यावरण और

अपनी अर्थव्यवस्था को सुरक्षित संरक्षित रखा जा सकें। परन्तु आपकी जिम्मेदारी है कि आप विश्व के पर्यावरण के वातावरण में भी सुरक्षित रह सकें।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी: क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1) पर्यावरण को परिभाषित कीजिये।

.....

.....

.....

.....

.....

2) 'पर्यावरण नीति अनेक चुनौतियाँ का सामना करती हैं'। चर्चा कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

14.3 राष्ट्रीय पर्यावरण नीति, 2006 के उद्देश्य और सिद्धान्त

14.3.1 उद्देश्य

राष्ट्रीय पर्यावरण नीति, 2006 (National Environment Policy - NEP) के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं:

i) संकटग्रस्त पर्यावरणीय संसाधनों का संरक्षण

ii) अन्तःपीढ़िगत कोटि की उन्नति गरीबों के लिए आजीविका की सुरक्षा

iii) अन्तर–पीढ़ीगत को समानता

iv) आर्थिक और सामाजिक विकास की योजना के साथ पर्यावरण की चिन्ताओं को एकीकृत करना।

v) पर्यावरणीय संसाधनों का सक्षमता के साथ प्रयोग

vi) पर्यावरणीय शासन

vii) पर्यावरणीय संरक्षण के लिए संसाधनों का संवृद्धि न करना।

14.3.2 सिद्धान्त

राष्ट्रीय पर्यावरण नीति, 2006 में इस नीति के सम्बन्ध विभिन्न अभिकर्त्ताओं की गतिविधियों के मार्गदर्शन के लिए कुछ सिद्धान्तों को सम्मिलित किया गया जो निम्न प्रकार हैं:

i) मानव का प्रकृति के साथ सामंजस्यता में स्वास्थ्य उत्पादकता का जीवन जीने का अधिकार है (सतत् विकास के केन्द्र में मानव को स्थापित किया गया है)।

ii) विकास के अधिकार का वितरण इस तरह से पूरा किया जाना नितांत आवश्यक है कि वर्तमान और भविष्य की पीढ़ियों में विकास और पर्यावरण की आवश्यकताएँ का सबको समान रूप से बराबर लाभ प्राप्त हो सके।

iii) सतत् विकास को प्राप्त करने के लिए पर्यावरण संरक्षण को विकास प्रक्रिया के एक समाकालीन भाग के रूप में निर्मित करना होगा।

iv) पर्यावरण की गिरावट को रोकने के लिए प्रभावी लागत उपायों को बन्द करने के लिए एक कारण के रूप में सम्पूर्ण वैज्ञानिक मानव शक्ति की कमी को स्वीकार नहीं किया जाएगा (सावधानी अपनाने का दृष्टिकोण)।

v) पर्यावरण संरक्षण के समर्थन में विभिन्न लोक कार्यों का निष्पादन आर्थिक सक्षमता को लागू करने समय सिद्धान्तों के अनुप्रयोग के माध्यम से पूरा किया जायेगा : (क) प्रदूषित करने वाले द्वारा भुगतान करना; (ख) लागत का न्यूनीकरण करना (आर्थिक संक्षमता मील का पत्थर होता है)।

vi) मानव स्वास्थ्य, जीवन और पर्यावरणीय जीवन–सहायक, प्रणाली का जोखिम से परिपूर्ण महत्व जिसका कि लोगों की व्यापक संख्या पर उनके कल्याण पर प्रभाव पड़ सकता है, ऐसी स्थिति को असमान या "तुलना करने योग्य" समझना चाहिए (अतुलनात्मक मूल्यों के साथ पहचान की जाए)।

vii) मानव के प्रति पर्यावरणीय संसाधनों के प्रयोग करने के सम्बन्ध में निर्णय–निर्माण की प्रक्रिया में अलग तरह से व्यवहार नहीं किया जा सकता है (समानता)।

viii) नीति वैधानिक दायित्वों के सिद्धान्तों को प्रकट करती है, जिसमें यह एक विचार निहित होता है कि प्रदूषणकर्त्ता भुगतान दृष्टिकोण के कानून डॉक्ट्रीन को सम्मिलित करना आवश्यक है।

ix) सभी प्राकृतिक संसाधनों का राज्य एक न्यासी होता है जिसमें प्राकृतिक के द्वारा सार्वजनिक प्रयोग और आमोद–प्रमोद के लिए स्वीकार किया जाता है जोकि राष्ट्रीय हितों के कार्यनीतिक मामलों को विषय के रूप में लागू करते हैं (सार्वजनिक न्यास सिद्धान्त)।

x) राज्य और स्थानीय स्तरों पर विशिष्ट पर्यावरण के मुद्दों के निपटाने के लिए केन्द्रीय प्राधिकरण इसकी शक्तियों को स्थानान्तरण और विकेन्द्रीकरण कर सकती है (विकेन्द्रीकरण)।

xi) पर्यावरण की नीतियों को सूत्रबद्ध करने, लागू करने और उनका मूल्यांकन करने के लिए केन्द्रीय, राज्य और स्थानीय स्वःशासन स्तर पर विभिन्न एजेंसियों के साथ संबद्ध करना आवश्यक होता है (एकीकृत)।

xii) पर्यावरण का स्तर आर्थिक और सामाजिक विकास की स्थितियाँ को आवश्यक रूप से प्रभावित करता हैं जिसमें कि उनको लागू किया जाता है (पर्यावरण स्तर की स्थापना करना)।

xiii) आरंभ में ही प्रथम बार में पर्यावरण में होने वाली हानियों को तुरंत ही प्राचीनता के आधार पर रोक देना चाहिए न कि वास्तविक हानि होने के पश्चात पर्यावरण के संसाधनों को पुनः ठीक करने या सुधारने के प्रयासों से पहले (रोकथाम की कार्रवाई)।

xiv) यदि अपवादात्मक रूप से लोक हितों की अनदेखी करनी पड़ जाए तो संकटों से निपटना कठिन होता है अथवा जीव–जन्तुओं की जातियों को खतरे से बचाना और प्राकृतिक प्रणाली का संरक्षण करना कठिन हो तो ऐसी स्थिति में जीवन को बचाना, लागत प्रभावी प्रतिकारक उपायों को कार्यकर्त्ताओं को अपने हाथ में लेना चाहिए (पर्यावरण प्रतिकारक)।

14.4 नीति और वैधानिक ढाँचा

भारत विश्व के कुछ देशों में से एक है जिसने विशेष रूप से अपने संविधान में पर्यावरण संरक्षण की आवश्यकता को समझा और उसमें इसको बचाने के लिए प्रावधानों को सम्मिलित किया। भारत के संविधान में अनुच्छेद 48 क और 51क (छ) में सतत् विकास को कानूनी आधार उपलब्ध कराया है: "राज्य देश के पर्यावरण की सुरक्षा और सुधार तथा जंगल एवं जंगली जीव–जन्तुओं की सुरक्षा और संरक्षण का सख्ती से प्रयास करेगा।" यह नागरिकों का कर्त्तव्य होगा कि "वे जंगलों, वनों, झीलों, नदियों एवं जंगली जीव–जन्तुओं सहित प्राकृतिक पर्यावरण की सुरक्षा और उसको उन्नत करेगा इसके साथ ही जितने भी जीवित प्राणी हैं, उन पर दया करेगा।" भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 की न्यायिक समीक्षा की गई है कि भारत के संविधान में जीवन जीने के अधिकार का क्षेत्र बहुत ही व्यापक है और इसमें व्यक्तिगत स्वतंत्रता के साथ में पर्यावरण की संरक्षा करना राज्य का कर्त्तव्य है।

अनेक राष्ट्रीय नीतियों में भूमि में गिरावट आना, मरूस्थलीकरण पर्यावरण में प्रदूषण का होना, इन सब पर पाबन्दी लगाना तथा इनको फिर से बदलना व परिवर्तन करने के सम्बन्धा में चिन्ता दर्षाई गई है उसके उपाय सुझाए गए हैं जैसे कि राष्ट्रीय जल नीति, 2012; राष्ट्रीय वन नीति, 1988; राष्ट्रीय कृषि नीति, 2000; राष्ट्रीय पर्यावरण नीति, 2006; किसानों के लिए राष्ट्रीय नीति, 2007 और राष्ट्रीय जनसंख्या नीति, 2000 इत्यादि सम्मिलित हैं। इसके अतिरिक्त, संवैधानिक प्रावधानों और राष्ट्रीय नीतियों के अलावा, बीते वर्शों में दो सौ से अधिक (केन्द्र द्वारा) केन्द्रीय कानून पारित किए गए और राज्यों द्वारा कानून अभिज्ञापित किए गए हैं जोकि प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप में पर्यावरण का संरक्षण एवं उसके प्रबन्धन से सम्बन्धित हैं। इसके साथ ही प्रमुख राष्ट्रीय पर्यावरण सम्बन्धी कानूनों के विहंगावलोकन पर निम्नलिखित अनुच्छेद उपलब्ध कराए गए हैं:

जल (प्रदूषण निवारण तथा नियंत्रण) अधिनियम, 1974 का अनुसरण करने के लिए संविधान के अनुच्छेद 252 (1) के अंतर्गत 12 राज्यों ने अपने यहाँ संकल्प पारित किए तथा भारत के संविधान के अनुच्छेद 152 के तहत केन्द्रीय संसद ने जल और वायु को प्रदूषित होने से बचाने के लिए वायु (प्रदूषण निवारण तथा नियंत्रण) अधिनियम, 1981 को पारित किया। इन बनाए गए कानूनों को लागू करने के लिए केन्द्र और राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्डों की स्थापना करके इनके माध्यम से नियंत्रण करने के उपाय किए गए थे। इसके साथ ही संसद ने प्रदूषण नियंत्रण के लिए और अधिक पहल पैदा करने के उद्देश्य से जल (प्रदूषण निवारण तथा नियंत्रण) उपकर अधिनियम, 1977 को पारित किया। इस अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार स्थानीय प्राधिकरण और निर्दिश्ट उद्योगों को जल का उपयोग करने के बदले में षुल्क का भुगतान करना है अर्थात उनको उपकर देने के लिए व भुगतान करने की व्यवस्था की गई है। यह अधिनियम षायद लगातार सन् 1984 की भोपाल गैस त्रासदी के लिए

आलोचना का मुख्य मुद्दा रहा था जिसमें निगरानी तथा विनियम के लिए कानूनी ढाँचे की कमी को इंगित किया गया था तथा इसमें यह भी कहा गया था कि इसके अतिरिक्त समुचित विशेषज्ञता का पूरी तरह से अभाव रहा। इन सब आलोचनाओं और पर्यावरण की कोटि की संरक्षा, संरक्षण और उसमें सुधार के लिए माँग की गई, इसको आधार बनाकर भारत सरकार ने पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 को पारित किया।

पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986 के द्वारा योजना बनाने तथा पर्यावरण सुरक्षा के लिए दीर्घ अवधि आवश्यकताओं को लागू करने के लिए एक ढाँचे की स्थापना की गई और इसमें पर्यावरण के लिए चुनौतीपूर्ण व खतरे की स्थितियों से तुरन्त और समुचित उपाय करने की एक प्रणाली प्राधिकारियों के सहयोग के लिए कानूनी ढाँचे की अभिकल्पना की गई और वायु, जल और भूमि और आपदापूर्ण पदार्थों से सम्बन्धित विभिन्न कानूनों का निर्माण करते हुए प्राधिकरणों की स्थापना की व्यवस्था की। इस अधिनियम के अंतर्गत एक निश्चित कोटि व स्तरों तथा औद्योगिक प्रदूषण के साथ जल, वायु और ध्वनि के लिए सीमाएँ निर्धारित करते हुए उन पर पाबन्दी के साथ केन्द्र और राज्य प्रदूषण नियन्त्रण बोर्डों को मार्गदर्शन के लिए कानूनों को और अधिक उन्नत करते हुए उनके सख्ती से प्रयोग के लिए निश्चित व्यवस्था के प्रावधानों का निर्माण किया।

वानिकी और वन्य जीव–जन्तुओं के सहित प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के क्षेत्र में कुछ कानूनों को पारित किया गया है। ब्रिटिश शासनकाल में भारतीय वन अधिनियम, 1927 पारित किया गया था जिसके बाद में इस अधिनियम की पुष्टि करते हुए इसमें संशोधन किया गया और इसको नई राष्ट्रीय वन नीति, 1988 के रूप में फिर से स्थापित किया गया था। भारत के वनों की जब त्वरित रूप से वन कटाई होने लगी तो इस खतरे की चेतावनी के उत्तर में केन्द्र सरकार ने वन (संरक्षण) अधिनियम, 1980 को पारित किया जिसमें यह शर्त लगाई गई कि जब राज्य सरकार संरक्षित वन को असंरक्षित वन क्षेत्र बनाना चाहे तो फिर वन की भूमि को गैर–वन के लिए प्रयोग करने के लिए वन भूमि को अन्य प्रयोग के लिए वन कटाई के लिए वन को साफ करना चाहे या वन कटाई करना चाहे यह सब कार्रवाई करने से पहले राज्य को केन्द्र सरकार से अनुमति लेना अनिवार्य शर्त होगी। वन्य जीव (संरक्षण) अधिनियम, 1972 में प्रावधान है कि राज्य वन जीव सलाहाकार बोर्डों की स्थापना करें, जंगल षिकार करने वाले वन्य जीवों और पक्षियों पर किसी भी प्रकार कार्रवाई करने के लिए वन सम्बन्धी विनियमों को प्रख्यायित करें तथा चिड़िया घर या वन्य जीवन अभयषाला का निर्माण करें, इसके साथ ही अभय वन अथवा पशु विहार और राष्ट्रीय पार्कों की अधिक से अधिक स्थापना करें। यहाँ पर यह बताना आवश्यक है कि कीटनाषी अधि ानियम, 1968 पारित किया गया जिसमें सभी कीटनाषी तथा कीटनाशक के सभी पक्षों को विनियमित किया जाये और उनके प्रयोग के सम्बन्धी सभी पहलुओं के सम्बन्ध में स्पष्ट किया जाए। इसके साथ ही जैव विविधता (विभिन्नता) अधिनियम, 2002 को पारित किया गया है, इसका उद्देश्य संरक्षण, सतत् प्रयोग करना और जैव संसाधनों तथा इससे सम्बन्धि ात सभी प्रकार की जानकारी व ज्ञान के प्रयोग करने से होने वाली आय अथवा होने वाले लाभों का हिस्सा समान रूप से निष्पक्षता से बाँटा जाए।

इसके साथ ही वैधानिक उपायों के अतिरिक्त नागरिक तथा आपराधिक कानूनों तथा जन हित मुकदमों से सम्बन्धित विनियमों की प्रणालियों, न्यायिक निर्णयों को सुनाना, उनकी घोषणा करना, ये सब इस सम्बन्ध में इन विनियमों को और अधिक शक्तिशाली बनाने में अपना योगदान देते हैं। अपराध प्रक्रिया संहिता तथा भारतीय दण्ड संहिता दोनों ही सार्वजनिक षोरषराबा तथा वायु, जल और ध्वनि प्रदूषण इत्यादि की रोकथाम और उस पर नियंत्रण करने जैसे प्रभावी और त्वरित उपायों को उपलब्ध कराते हैं।

इसके साथ ही लोक दायित्व बीमा अधिनियम, 1991 द्वारा खतरनाक पदार्थों का काम करते समय प्रयोग करने से होने वाली दुर्घटना के कारण पीड़ित को तुरन्त राहत देने के लिए प्रावधान उपलब्ध कराता है। इस अधिनियम के अतिरिक्त अन्य वैधानिक व कानूनी उपायों का निर्माण भी किया गया है जैसे कि कारखाना अधिनियम, 1948, खान अधिनियम, 1952 और मोटरयान अधिनियम 1939 आदि कारखानों में पर्यावरण की सुरक्षा को उन्नत करते हैं तथा वाहनों से होने वाले प्रदूषण पर नियंत्रण और उसकी रोकथाम तथा निर्धारित उपायों के तहत पर्यावरण की सुरक्षा करते हैं।

केन्द्रीय पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मन्त्रालय (Ministry of Environment, Forest and Climate change (MoEF&CC) ने ठोस अपशिष्ट प्रबन्धन विनियम, 2018 को निर्मित किया है और यह नगरपालिकाओं और ग़ैर–नगरपालिकाओं में लागू होता है। इन नियमों के अंतर्गत अपशिष्ट के स्रोत स्थल पर पष्थ्क्करण करना आदेशात्मक है। इसी प्रकार से मन्त्रालय ने प्लास्टिक अपशिष्ट प्रबन्धन विनियम, 2016 और निर्माण एवं तोड–फोड़ अपशिष्ट प्रबन्धन नियम अपशिष्ट के निपटान के कार्यों को नियमित किया है।

संरक्षण और नमी भूमि का सदोपयोग करने के लिए पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मन्त्रालय ने नमी भूमि (संरक्षण और प्रबन्धन) नियम (Wetlands (Conservations and Management) Rules), 2010 को अधिसूचित किया है। इस नियम के अंतर्गत नमी भूमि का संरक्षण और नियंत्रण करने के लिए केन्द्रीय नमी भूमि विनियामक प्राधिकरण (Central Wetland Regulatory Authority) की स्थापना की है।

14.4.1 पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मन्त्रालय की भूमिका और उद्देश्य

पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मन्त्रालय (Ministry of Environment, Forest and Climate change (MoEF&CC) पर्यावरण के संरक्षण में निर्णायक भूमिका निभाती है। यह परियोजनाओं के पर्यावरणीय प्रभावों का आंकलन करने के लिए विशेषज्ञ समितियों की नियुक्ति करती हैं जोकि अन्य एजेंसियों से अनुमति प्राप्त करती है उनमें अनुमोदित करवाती है जैसे कि केन्द्रीय जल आयोग, केन्द्रीय विद्युत प्राधिकरण और लोक निवेश बोर्ड इत्यादि इसमें सम्मिलित हैं। निवेश की सीमाएँ या क्षेत्र जो विभिन्न क्षेत्रों में पर्यावरण के लिए आवश्यकता के आधार पर पर्यावरण की निर्बाधितता की वैधता को प्राप्त करते हैं। पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मन्त्रालय भारत के पर्यावरण के अवलोकन और उसके कार्यों को लागू करने के लिए यह एक नोडल एजेंसी है तथा यह झीलों और नदियों, इसकी जैव विविधताओं सहित देश के प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण से सम्बन्धित वन सम्बन्धी नीतियों और कार्यक्रमों और वन्य जीवों, पशुओं के कल्याण करने को सुनिश्चित करने तथा प्रदूषण करने के लिए उकसाने के कार्यों पर रोक लगाती है, पाबन्दी करती है और इन सम्बन्धित कानूनों को लागू करती हैं। जब इन नीतियों और कार्यक्रमों को लागू किया जाता है मन्त्रालय सतत् विकास के सिद्धान्तों के द्वारा मार्गदर्शित होता है अथवा यह कह सकते हैं कि इन सिद्धान्तों का अनिवार्य रूप से पालन करता है। मन्त्रालय संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (United Nations Environment Programme - UNEP) तथा पर्यावरण से सम्बन्धित अन्य अन्तर्राष्ट्रीय/बहुराष्ट्रीय निकायों की भी नोडल एजेंसी है।

राज्य के पर्यावरण विभागों के अतिरिक्त और केन्द्रीय तथा राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्डों, अनेक अन्य केन्द्रीय संस्थान पर्यावरण की नीतियों और कानूनों के कार्यान्वयन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इन क्षेत्रों में जैसे कि ठोस अपशिष्ट, प्रबन्धन, जल परिषोधन, स्वास्थ्य तथा स्वच्छता व साफ सफाई के संरक्षण के कार्यों में राज्य सरकारें तथा शहरी एवं ग्रामीण

स्थानीय निकायों के पर्यावरण के संरक्षण में कार्य करना और उनका पालन करना यह सब आज्ञापक या आदेशात्मक हैं जिनका पालन करना अनिवार्य है।

14.5 पर्यावरण की आर्थिक संवृद्धि और शहरीकरण की चुनौतियाँ

एक ओर आर्थिक संवृद्धि और शहरीकरण के बीच सम्बन्ध तथा दूसरी ओर पर्यावरण की कोटि को बनाए रखना अत्यंत जटिल समस्या है। आर्थिक गतिविधियों और संवृद्धि के मध्य या बीच में प्राकृतिक पर्यावरण स्थित है जो संसाधनों और कच्चे माल की आपूर्ति करता है (जैसे कि जल, लकड़ी, खनिज, इत्यादि) जोकि वस्तुओं के उत्पादन और सेवाओं में प्रयोग करने की आवश्यकता पड़ती है, और इन उत्पादों के निर्माण में औद्योगिक मल निर्गम और प्रदूषित अन्य पदार्थों का निर्माण होता है जिनका निपटान अथवा उनको सोखना आवश्यक होता है। हालाँकि, वर्तमान नीतियों और गतिविधियों का उद्देश्य मात्र आर्थिक संवृद्धि और शहरीकरण बन गया है जिसके परिणामस्वरूप मानव इतिहास में पर्यावरण के व्यापक स्तर को नष्ट करके और विकास की अपूर्व गति ने सर्वनाश कर दिया है। पर्यावरण के विनाश से मानव और अन्य जीव–जन्तुओं और प्राणियों के लिए उनके स्वास्थ्य और उनको जीवित रहने के लिए एक संकटपूर्ण चुनौती खड़ी हो गई है। भारत में वन कटाई के कारण वनस्पतियों और प्राणियों सहित जीव–जन्तुओं का जीवन संकटपूर्ण बन चुका है। दिल्ली और राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में दिसम्बर 2018 में वायु की कोटि इतनी गिर गई थी जोकि जीवन के लिए असहनीय हुई और पूरे देश में फॉग की एक मोटी परत जम गई थी जिसके कारण लोगों का ष्वास लेना कठिन हो गया था जिसके कारण लोग 3–4 दिन के लिए अपनी सभी गतिविधियों को छोड़कर लोग अपने–अपने घरों में दुबके बैठे रहे थे, दिल्ली के लोगों का कार्य पूरी तरह से ठप हो गया था।

सरकार की दीर्घ अवधि पर्यावरण नीति के ढाँचे के लिए गतिविधियों के सभी समोच्चों की पहचान करनी चाहिए। इसका निर्णय करते समय तीन प्रमुख घटकों को ध्यान में रखा जाना चाहिएः (क) आर्थिक गतिविधियों का आज्ञात्मक माना जाए; (ख) पर्यावरण को संकटपूर्ण चुनौती और (ग) निम्न कार्बन तथा संसाधन के लिए सक्षम प्रौद्योगिकी प्रयोग करना। इस के साथ लघु अवधि तथा दीर्घ अवधि दोनों के बीच प्रथम और द्वितीय घटक को ट्रेड ऑफ रखना चाहिए। पर्यावरण की प्राकृतिक सम्पत्ति की स्थिति दीर्घ अवधि के लिए सतत् संवृद्धि में मुख्य कारक है। नई प्रौद्योगिकियों की खोज या अनुसंधान आर्थिक उत्पादकता संवृद्धि और प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन दोनों के लिए सहायतापूर्ण व लाभदायक सिद्ध होगी। पर्यावरण की नीतियों पर निर्णय लेते समय सार्वजनिक और निजी हितों की व्यापक सीमाओं को ध्यान में रखा जाना चाहिए। विकल्पात्मक नीतियों की लागत और तकनीकी समाधानों, पर्यावरण की समस्याओं के आर–पार या विपरीत प्रकृति को भी ध्यान में रखा जाना आवश्यक है और नीतियों को लागू करने में या विनियमों को लागू करने में सार्वजनिक संस्थानों की भूमिका एवं उनकी क्षमताओं की अनदेखी नहीं की जानी चाहिए (ब्राटोन, 1994)।

बोध प्रश्न 2

टिप्पणीः क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1) पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986 पर टिप्पणी लिखिए।

.....

.....

.....

.....

2) प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के क्षेत्र में पारित की गई संविधियों की संख्या लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

14.6 निष्कर्ष

सम्पूर्ण विश्व में यह एक भयानक चुनौती बन गई है कि मानव गतिविधियों के कारण हुए नुकसान या हानि को किस तरह से कम किया जाए जिससे कि पारिस्थिति तन्त्र मानव और ग़ैर–मानव के जीवन में गिरावट ले आये। इस तरह से हम देखते हैं कि पर्यावरण के मुद्दे अैर अधिक क्षेत्रों में व्याप्त हो गए हैं अब से पहले के किसी भी समय से अधिक प्रकटपूर्ण और गहरे हो गए हैं। पर्यावरण की कोटि में सुधार करने के विचार को ध्यान में रखते हुए जिसमें कि वर्तमान और भविष्य की पीढ़ियाँ निर्भर करेगी, इसलिए संपूर्ण विश्व के सभी देशों द्वारा कानूनी और विनियमायक ढाँचे की रचना की है। भारत में इस ढाँचे की प्रभावकारिता और समुचित उपयोगिता की व्यापक आलोचना की गई है। यह विचार इंगित किए गए हैं कि भारत में पर्यावरण सम्बन्धी नीति का निर्माण किया है उसमें गंभीर संकल्पनात्मक समस्याएँ हैं जिनके नाम हैंः सम्पूर्ण उद्देश्यों की सुसंगति या प्रासंगिकता की कमी का होना, प्राथमिकताओं की पहचान में भारी कमियाँ और पद्धतियाँ तथा नीतिगत उपायों की अनोपयोगिता ही सिद्ध हुई हैं। इसके अतिरिक्त पष्चिमी देशों की तुलना में परिवर्तन में पर्यावरण संरक्षण का कार्यान्वयन बहुत ही पिछड़ा हुआ है। आलोचक भारतीय नीति निर्माताओं की प्रवषत्तियों पर निषाना साधते हुए कहते हैं कि इनको अपनी आँखे खोल लेनी चाहिए और आपदाओं की घटना घटने के पश्चात इनको सबक लेते हुए समझदारी से काम लेना चाहिए।

इसके साथ ही ऊर्जा और खाद्य सुरक्षा से सम्बन्धित नीतियों, योजनाओं और कार्यक्रमों उद्योग विस्तार, शहरीकरण, परिवहन का विस्तार करते समय पर्यावरण और विकास के बीच सावधानीपूर्ण संतुलन बनाए रखने की आवश्यकता है। किसी भी दिए गए उद्देश्य को प्राप्त करने की दिशा में एक व्यक्ति को कार्य आरंभ करने और उसको लागू करने से पूर्व विश्लेषण के लिए सूचना एवं उसके ढाँचे के सम्बन्ध में जानना अत्यंत आवश्यक होता है। यह पर्यावरण के सम्बन्ध में जानना अत्यंत आवश्यक होता है। यह पर्यावरण के सम्बन्ध में सबसे अधिक लागू होता है बल्कि अन्य क्षेत्रों में इसकी आवश्यकता नहीं होती है। यह जीवन का महत्वपूर्ण आधार है, कि हमें जल, वायु और भूमि की गुणवत्ता, उसकी कोटि को संरक्षित रखना और उसमें सुधार करना है। इसके साथ ही, इसी समय यह आवश्यक है कि सरकार की निगरानी करना, उसका डिजाइन तथा ठीक समय पर ध्यान देना और ठीक समय पर अन्तःक्षेप करने की क्षमताओं में सुधार करना अत्यंत आवश्यक है। पर्यावरण सम्बन्धी नीतियों का उद्देश्य प्रयोग की गई या प्राकृतिक संसाधनों को खो चुकने के पश्चात उनका पुनः सृजन करने तथा अपने षत्रु का नवीनीकरण करने के पश्चात् उस पर भरोसा करना भी आवश्यक है। नीति का अंतःक्षेप वर्तमान तथा भविष्य की पीढ़ियों के लिए प्राकृतिक संसाधनों के जीवन की निश्चित गुणवत्ता या कोटि का संरक्षण तथा उसमें सुधार करने की

सुविधा भी होनी चाहिए।

14.7 शब्दावली

जैव विविधता (Biodiversity): इसका सामान्यतः अर्थ विश्व में या विशेष प्राकृतिक वास में पौधों और पशुओं में जीवन विविधताएँ होता है।

सतत् विकास (Sustainable Development): यह परिवर्तन की एक प्रक्रिया है जिसमें संसाधनों का धोहन या उनका दुरुपयोग, प्रौद्योगिकीय विकास का नवीनीकरण तथा संस्थागत परिवर्तन भविष्य इसी तरह से वर्तमान आवश्यकताओं के साथ एकीकृत हो जाता है।

प्रदूषण (Pollution): एक पदार्थ का पर्यावरण में उपस्थित या उसमें प्रविष्ट होना जिसका प्रभाव हानिकारक होता है, उसे प्रदूषण कहते हैं।

सौर ऊर्जा (Solar Energy): यह विकीर्ण ऊर्जा है जो सूर्य के द्वारा उत्सर्जित होती है।

14.8 संदर्भ लेख

Bartone, C., J. Bernstein and J. Leitmann. (1994). *Toward Environmental Strategies for Cities.* Washington D.C., USA: The World Bank.

Basu, D.D. (2015). *Introduction to the Constitution of India.* Gurgaon, India: Lexis Nexis.

Birkland, T. (2011). *An Introduction to the Policy Process*. New Delhi, India: PH1 Learning.

GOI. (2017). *Annual Report 2017-18*. New Delhi, India: Ministry of Environment, Forest and Climate Change, Government of India.

GOI. (2006). *National Environment Policy, 2006.* New Delhi, India: Ministry of Environment, Forest and Climate Change, Government of India.

GOI. (2018). *India 2018: A Reference Annual*. New Delhi, India: Publications Division, New Delhi.

Kapur, R. E. (2018). *Environmental Protection in India: A Regulatory Framework*. Retrieved from: http:ll iced.cag.gov.inlwp

Reich, M.R. (1992). Environmental Policy in India. *Policy Studies Journal*. 20 (4).

14.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) आपके उत्तर में निम्न को सम्मिलित होना चाहिएः

- पर्यावरण के घटक
- पर्यावरण का अर्थ, आसपास का वातावरण या स्थितियाँ जिनमें एक व्यक्ति या पशु या पौधे जीवित रहते हैं अथवा परिचालन करते हैं।

- पर्यावरण पर उनके प्रभावों के सम्बन्ध के साथ मानव और अन्य जाति के प्राणियों के बीच अन्तर

2) आपके उत्तर में निम्न को सम्मिलित होना चाहिएः

- गरीबी और जनसंख्या का विस्फोट
- भूमि, मरूस्थलीकरण तथा वनकटाई करने पर दबाव
- संस्थागत और नीतियों का असफल होना
- वैष्विक पर्यावरण मुद्दे

बोध प्रश्न 2

1) आपके उत्तर में निम्न को सम्मिलित होना चाहिएः

- भारतीय वन अधिनियम, 1927
- वन्य जीव (संरक्षण) अधिनियम, 1972
- कीटनाषी अधिनियम, 1968
- जैव विविधता (विभिन्नता) अधिनियम, 2002

2) आपके उत्तर में निम्न को सम्मिलित होना चाहिएः

- पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986 द्वारा अध्ययन करने, योजना बनाने तथा पर्यावरण सुरक्षा की दीर्घ अवधि की आवश्यकताओं को लागू करना;
- यह निश्चित स्तर तथा औद्योगिक प्रदूषण के लिए सीमाओं को स्थापित करना या निश्चित करना इसी तरह से जल, वायु और ध्वनि प्रदूषण को रोकने में केन्द्र और राज्य प्रदूषण नियन्त्रण बोर्डों के मार्गदर्शन के लिए कानूनों को उन्नत करना;
- यह एक ऐसा विशेष स्थान है जहाँ पर वायु, जल तथा भूमि और खतरनाक पदार्थों से सम्बन्धित विभिन्न संविधियों के अंतर्गत केन्द्रीय और राज्य प्राधिकारियों की स्थापना करने के संयोजन के लिए संविधियों का ढाँचा उपलब्ध कराना।